वैदिक कालीन नारी : महिला सशक्तिकरण

डॉ० रंजना रावत,

एसोसिएट प्रोफेसर, इतिहास,
डी0ए0वी0 (पी0जी0) कॉलेज,
देहरादून

वेदों के मुख्य विषय है – कर्म, उपासना और ज्ञान, जो समस्त मानव जाति के धर्म हैं। वेद ज्ञान के भण्डार हैं। उस भण्डार में खोज करने पर नारी के महत्व और उसके सामाजिक–शैक्षिक योगदान को प्रकाशित करने वाले विषय भी दृष्टिगोचर होते हैं। चारो वेदों में से अधिकांशतः ऋग्वेद में ही प्राचीन काल से चली आने वाली नारी की सभ्यता और संस्कृति पर प्रकाश डाला गया है। वैदिक काल में महिलाओं की स्थिति ससमाज में अत्यन्त ऊँची थी और उन्हें अभिव्यक्ति की पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त थी। उन्हें धार्मिक क्रियाओं में पुरोहितों एवं ऋषियों का दर्जा प्राप्त था। वे धर्मशास्त्रार्थ में भी भाग लेती थीं।

मानव जीवन की धुरी तीन आधारों पर टिकी है – ज्ञान, धर्म और शान्ति। ज्ञान, धर्म व शान्ति की स्वामिनी के रूप में स्त्री वाचक शब्द का प्रयोग होना उसकी श्रेष्ठता को बताता है। स्त्री को समृद्धि और संस्कृति की अधिष्ठात्री भी कहा जाता है। परा और अपरा शक्ति के रूप में चर्चा तत्व ज्ञानी हमेशा से करते रहे हैं। सरस्वती, लक्ष्मी, दुर्गा आदि अनेक रूपों में उसकी आराधना होंती रही है। इन्हीं शक्तियों का संयुक्त एवं मूर्तिमान रूप नारी है। हिन्दू समाज में स्त्री का सम्मान और आदर प्राचीन काल से ही आदर्शात्मक और मर्यादायुक्त था। परिवार और समुदाय में उनके द्वारा कन्या, पत्नी, वधू और माँ के रूप में किये जाने वाले योगदान का सर्वदा महत्व और गौरव रहा है। सरस्वती देवी, पतितपावनी, धनदायिनी, सत्य की ओर प्रेरित करने वाली, शिक्षिका और ज्ञानदात्री मानी गयी है । इस काल में विशपला तथा मुद्गलानी जैसी तत्कालीन ख्याति प्राप्त नारियों का वर्णन भी प्राप्त होता है। शिक्षा, गृहस्त जीवन, यज्ञ–अनुष्ठान में स्त्रियों का सम्मानप्रद स्थान प्राप्त था। विधवाओं का पुनर्विवाह भी प्रचालित था।

वैदिक कालीन नारी की जब हम बात करते हैं तो हमें उसके विभिन्न् रूपों और कार्यों का अवलोकन होता है। शिक्षा, धर्म, व्यक्तित्व और सामाजिक विकास में उसका महान योगदान था। नववधू को श्वसुरगृह की साम्राज्ञी माना जाता था। उसे पति के साथ प्रत्येक कार्य में सहयोगी माना जाता था। ऋग्वैदिक नारी पुरूषों की ही तरह समाज की स्थायी और गौरवशाली अंग थी। वह अत्यन्त सुशिक्षित, सुसभ्य तथा सुसंस्कृत होती थी। वह पति के साथ मिलकर याज्ञिक कार्य सम्पन्न कराती थी। वैदिक युगीन नारी स्वछन्द एवं मुक्त थी परन्तु उसे सामाजिक मान–सम्मान प्राप्त था। वैदिक युग में स्त्री शिक्षा अपनी उच्चतम सीमा पर थी। ऋग्वेदिक पंडिता स्त्रियों यथा–रोमशा, अपाला, उर्वशी, विश्ववारा, सिकता, निवावरी, घोषा, लोपामुद्रा आदि ने अध्ययन–अध्यापन के साथ–साथ अनेक ऋचाओं का भी प्रणमन किया था। उच्च शिक्षा प्राप्त स्त्री को विवाह योग्य अत्यधिक उत्तम माना जाता था। वैदिक कालीन स्त्रियाँ ब्रहमचर्य धर्म का पालन करते हुए उपनयन संस्कार भी कराती थी तब शिक्षा ग्रहण करती थी। ब्रहमयज्ञ में जिन ऋषियों की गणना की जाती है उनमें सुलभा,

गार्गी, मैत्रेयी आदि विदुषियों के भी नाम सम्मानपूर्वक लिये जाते हैं जिनकी प्रतिष्ठा वैदिक ऋषियों के समान थी। वैदिक ज्ञान के साथ–साथ ललित कलाओं में भी पारंगत होती थी। सहशिक्षण पद्धति के अन्तर्गत ही छात्र–छात्राएँ एक साथ शिक्षा ग्रहण करते थे। पूर्व वैदिक कालीन अपाला ने अपने पिता को कृषि कार्य में सहयोग प्रदान किया था जो स्त्री ज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों का उदाहरण प्रस्तुत करता है।

वैदिक कालीन स्त्रियाँ गाय दुहना (दुहिता), सूत कातना, बुनना और वस्त्र सिलना भी जानती थी। तत्कालीन स्त्रियाँ नृत्य कला में भी निपुण थी और साथ ही ऋचाओं का गान भी करती थी। इस प्रकार वैदिक कालीन स्त्री वैदिक शिक्षा के साथ–साथ नृत्य, संगीत, गान, चित्रकला आदि विषयों की भी शिक्षा ग्रहण करती थी। स्त्री अपना सर्वागीण विकास करने हेतु तत्पर रहती थी। ''ब्रह्मचर्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम्'' इस वाक्य से ज्ञात होता है कि कन्याएँ ब्रह्मचर्यपूर्वक गुरूकुल में निवास कर शिक्षा पूर्ण करने के अनन्तर ही युवा पति से विवाह करने की कामना करती थी। विवाह के अवसर पर पति–पत्नी दोनों ही कतिपय प्रतिज्ञायें करते थे, जिनका प्रयोजन एक दूसरे के प्रति कर्तव्यों का पालन करते हुए जीवन बिताना होता था। प्राचीन भारत में सभी स्त्रियाँ विवाह करके गृहस्थ जीवन ही व्यतीत नहीं करती थीं बल्कि बहुत सी स्त्रियाँ नृत्य, वादन, संगीत द्वारा जनसाधारण का मनोरंजन का भी कार्य करती थीं। ऐसी स्त्रियों को समाज में सम्मानजनक स्थान प्राप्त था। वैदिक काल में प्रचलित विवाह संस्कार के अनिवार्य अनुष्ठान आजतक वैसे ही चले आ रहे हैं।

वैदिक युग में स्त्री को सम्पत्ति अधिकार प्राप्त थे। वैदिक मंत्रों में संकेत मिलता है कि ससन्तान न होने पर पति के पश्चात् पत्नी ही सम्पत्ति की स्वामिनी होती थी। पुत्र न होने पर पिता की सम्पत्ति की उत्तराधिकारी मानी जाती थी। कभी–कभी स्त्रियाँ अपने सम्पत्ति विषयक अधिकार हेतु न्यायालय भी जाती थी। इसका तात्पर्य यह है कि वैदिक स्त्री अपने अधिकारों के प्रति भी जागरूक थी। वैदिक युगीन नारी स्वतन्त्र और स्वछन्द भी थी। उस समय परदा या अवगुंठन का कोई प्रचलन नहीं था। तभी सहशिक्षा का वातावरण था। साथ ही ऋग्वैदिक वर्णन बताते हैं कि नववधू सभी आगतों को दिखायी जाती थी । यह प्रदर्शित. करता है कि वैदिक युगीन नारी नैतिकता, चारित्रिक सौष्ठव, निष्ठा, उज्जवल आचरण, सुसंस्कृतता की प्रतिमूर्ति थी। तत्कालीन स्त्री वैदिक समाज का एक आदर्श उदाहरण थी तथा यह आशा की जाती थी कि वह अपनी वृद्धावस्था तक जनसभाओं में बोल पाएगी तथा लोगों को समझ पाएगी। वैदिक कालीन नारी विदथ (सभा और समिति) तथा समन (उत्सव और मेला) में स्वच्छन्दतापूर्वक सम्मिलित होती थी। नारी स्त्रीधन से ब्राहमणों को दान देती थी। वृद्धावस्था तक नारी अपने घर में प्रभुता रखती थी।

वैदिक ग्रन्थों के अध्यनोपरान्त ज्ञात होता है कि तत्कालीन नारी की दशा अत्यन्त उन्नित और परिपकृत थी तथा हिन्दू जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में वह समान रूप से आदृत और प्रतिष्ठित थी। उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट हो जाता है कि वैदिक कालीन नारी का समाज में सम्मानीय और गरिमामय स्थान था। वैदिक कालीन नारी में अनेकानेक गुण थे जिसके कारण समाज में देवी और श्री के रूप में आदृत और सम्मानित थी। वैदिक युगीन स्त्री अपनी अस्मिता, अस्तित्व को बनाये रखने हेतु कृत संकल्प रहती थी। तत्कालीन नारी हर क्षेत्र में अपना योगदान दे रही थी। वैदिक वर्णनों से परिलक्षित होता है कि तत्कालीन नारी अपने विकास हेतु जागरूक थी। वैदिक साहित्य में कुछ ही ख्याति प्राप्त महिलाओं के वर्णन से ज्ञात होता है कि ये तत्कालीन समाज में विशेष ख्याति प्राप्त स्त्रियाँ थी। वैदिक काल में स्त्री को उच्च स्तर प्रदान किया जाता

था और उसे वरिष्ठ माना जाता था तथा उसे देवी की उपमा दी जाती थी। वर्तमान में महिलाओं ने ऐतिहासिक उद्धरणों के अध्यनोपरान्त अपनी मेहनत और आत्मविश्वास के आधार पर अपने लिए नई मंजिले नये रास्तों का निर्माण किया है। महिलाओं की स्थिति में सुधार ने देश के आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक मायने ही बदल दिये हैं। आज के इस प्रतिस्पर्धात्मक युग में महिलायें अपने अधिकारों के प्रति पहले से सचेत हैं। नारी उत्थान में ही भारत के उज्जवल भविष्य की सम्भावनायें सन्निहित है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- मिश्र जयशंक, 2006. प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना।
- ऋग्वेद 10.85.46 सम्राज्ञी स्वसुरें नव साम्राज्ञी अधिदेवृषु ।
- ऋग्वेद 1.72.5, 5.32, 8.31 या दम्पत्ति सुममसा आ च धावतः। देवा सोनित्या शिरा।।
- विद्यालंकर–सत्यकेतु, 1996, प्राचीन भारत का ध0सा0आ0 जीवन, सरस्वती सदन, नई दिल्ली।
- झा एवं श्रीमाली, 2001. प्राचीन भारत का इतिहास, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली।
- ऋग्वेद 7.48, 1.124.7 – अभ्रातेव पुंस एति प्रतीवो गर्तारूगिव सनये धनानाम्।
- अर्थर्ववेद 44.1.21 – जुष्टा नरेयु समनेषु, वल्गुः ।
- अर्थर्ववेद 10.85.33 सुमंगलरियं वधूरिया – दस्वायाधास्वितं परेतन् ।।
- अर्थर्ववेद 10.85 सम्राज्ञी श्वसुरे – त्वं विथम विदास।।
- राजकुमार, 2005 – नारी के बदले आयाम, अर्जुन पब्लिशिंग हाऊस।
- अल्तेकर, ए.एस. 1956. द पोजीशन आफ विमेन इन हिन्दू सिवलाइजेशन। मोतीलाल बनारसीदास, वारानसी।

Copyright © 2014, Dr. Ranjana Rawat. This is an open access refereed article distributed under the creative common attribution license which permits unrestricted use, distribution and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.